



उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चौखी खेती

अप्रैल, 2026

जैविक खेती और विस्तार शिक्षा : किसानों के लिए हरित भविष्य

अनिशा¹, सोनिया सारण² और पूजा यादव³

भारत की कृषि आज ऐसे मोड़ पर है जहाँ टिकाऊ विकास और पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता अत्यधिक है, क्योंकि रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग ने मिट्टी, जल और मानव स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाया है; ऐसे में जैविक खेती एक हरित, सुरक्षित और दीर्घकालिक विकल्प बनकर उभर रही है, जो प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, मिट्टी की उर्वरता, जैव विविधता संरक्षण और उपभोक्ता स्वास्थ्य सुधार में सहायक है। यह किसानों को प्राकृतिक खाद, वर्मी कम्पोस्ट और जैविक कीट प्रबंधन जैसी तकनीकों अपनाने का अवसर देती है, जिससे लागत घटती है और उत्पाद का मूल्य बढ़ता है। इसे सफल बनाने में कृषि विस्तार शिक्षा निर्णायक है, क्योंकि यह किसानों तक वैज्ञानिक ज्ञान, प्रशिक्षण, प्रमाणन और बाजार से जुड़ाव पहुँचाकर उन्हें टिकाऊ खेती अपनाने के लिए प्रेरित करती है। विस्तार शिक्षा स्थानीय भाषा, फील्ड डेमो और डिजिटल प्लेटफॉर्म से किसानों को जागरूक करती है, जिससे वे पर्यावरण-अनुकूल खेती अपनाकर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धी बनते

हैं। इस प्रकार जैविक खेती और विस्तार शिक्षा का समन्वय भारतीय किसानों के लिए हरित भविष्य की नींव रखता है।

जैविक खेती का महत्व

1. मिट्टी की उर्वरता में सुधार—

जैविक खेती का सबसे बड़ा लाभ मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरता को बनाए रखना है। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से मिट्टी की संरचना और सूक्ष्मजीव नष्ट हो जाते हैं, जिससे दीर्घकालिक उत्पादन क्षमता घटती है। इसके विपरीत, जैविक खाद, गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट और हरी खाद मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाते हैं। इससे मिट्टी की जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों का संतुलन और सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बनी रहती है, जो फसलों की निरंतर और स्थायी उपज सुनिश्चित करती है।

2. स्वास्थ्य सुरक्षा—

जैविक खेती से प्राप्त खाद्य पदार्थ रासायनिक अवशेषों से मुक्त होते हैं। रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों के प्रयोग से उत्पादों में हानिकारक अवशेष रह जाते हैं, जो उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जैविक खेती में

प्राकृतिक कीट प्रबंधन और जैविक खाद का प्रयोग किया जाता है, जिससे खाद्य पदार्थ सुरक्षित, पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक बनते हैं। यह उपभोक्ताओं को दीर्घकालिक स्वास्थ्य सुरक्षा प्रदान करता है।

3. पर्यावरण संरक्षण—

जैविक खेती पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। रासायनिक खेती से जल स्रोतों में प्रदूषण, वायु में हानिकारक गैसों का उत्सर्जन और भूमि की गुणवत्ता में गिरावट होती है। जैविक खेती में प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग किया जाता है, जिससे जल, वायु और भूमि प्रदूषण कम होता है। साथ ही यह जैव विविधता को संरक्षित करती है और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखती है।

4. बाजार अवसर—

आज के समय में उपभोक्ताओं की जागरूकता बढ़ रही है और वे सुरक्षित व स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों को प्राथमिकता दे रहे हैं। इसी कारण जैविक उत्पादों की मांग राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेजी से बढ़ रही है। जैविक खेती करने वाले किसानों को घरेलू बाजार के साथ-साथ

1. विद्यावाचस्पति (कृषि प्रसार तथा संचार विभाग) स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान-334006

2. विद्यावाचस्पति छात्रा (कृषि प्रसार शिक्षा विभाग) श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान-303329

3. विद्यावाचस्पति छात्रा (कीट विज्ञान) कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान-342304

निर्यात के अवसर भी प्राप्त होते हैं। इससे उन्हें बेहतर मूल्य मिलता है और उनकी आय में वृद्धि होती है।

5. टिकाऊ आजीविका—

जैविक खेती किसानों को दीर्घकालिक लाभ और स्थिर आय प्रदान करती है। रासायनिक खेती में लागत अधिक होती है और मिट्टी की गुणवत्ता समय के साथ घटती जाती है, जिससे किसानों की आय अस्थिर रहती है। जबकि जैविक खेती में लागत अपेक्षाकृत कम होती है और मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है। इसके परिणामस्वरूप किसानों को स्थायी उत्पादन और टिकाऊ आजीविका प्राप्त होती है।

विस्तार शिक्षा की भूमिका

1. प्रशिक्षण और जागरूकता—

कृषि विस्तार शिक्षा का सबसे पहला और महत्वपूर्ण कार्य किसानों को प्रशिक्षण देना और उन्हें जागरूक करना है। जैविक खेती के लाभ, तकनीक और प्रक्रियाओं के बारे में किसानों को जानकारी देना आवश्यक है ताकि वे इसे अपनाने के लिए प्रेरित हों। प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को कम्पोस्ट बनाने, जैविक कीट प्रबंधन, फसल चक्र और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग जैसी तकनीकों का ज्ञान दिया जाता है। इससे किसान न केवल टिकाऊ खेती अपनाते हैं बल्कि दीर्घकालिक लाभ भी प्राप्त करते हैं।

2. प्रदर्शन और प्रयोग—

केवल सैद्धांतिक जानकारी किसानों के लिए पर्याप्त नहीं होती, इसलिए विस्तार शिक्षा के अंतर्गत खेतों में प्रदर्शन प्लॉट (Demo Plots) स्थापित किए जाते हैं। इन प्लॉट्स पर जैविक खेती की विभिन्न तकनीकों का व्यावहारिक प्रदर्शन किया जाता है, जिससे किसान प्रत्यक्ष रूप से परिणामों का अवलोकन कर सकें। इस प्रकार की प्रयोगात्मक शिक्षा किसानों को यह विश्वास दिलाती है कि जैविक खेती न केवल व्यवहारिक रूप से संभव है, बल्कि इससे उत्पादन क्षमता और उत्पाद की

गुणवत्ता दोनों में उल्लेखनीय सुधार होता है। औपचारिक प्रदर्शन और प्रयोग किसानों को नई तकनीकों को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं तथा उन्हें वैज्ञानिक पद्धतियों के लाभों का प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करते हैं।

3. डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग

आज के समय में डिजिटल तकनीक किसानों तक जानकारी पहुँचाने का सबसे सशक्त माध्यम है। मोबाइल ऐप्स, ऑनलाइन पोर्टल और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म के माध्यम से किसानों को मौसम पूर्वानुमान, फसल सलाह, बाजार मूल्य और प्रशिक्षण सामग्री उपलब्ध कराई जाती है। विस्तार शिक्षा विभाग इन डिजिटल साधनों का उपयोग करके किसानों को समय पर और सटीक जानकारी प्रदान करता है, जिससे वे आधुनिक तकनीक अपनाने में सक्षम होते हैं।

4. सहकारी समितियाँ और FPOs

जैविक खेती को बढ़ावा देने में सहकारी समितियाँ और किसान उत्पादक संगठन (FPOs) महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सामूहिक प्रयासों से किसान अपने उत्पादों का विपणन कर सकते हैं और मूल्य संवर्धन कर सकते हैं। विस्तार शिक्षा इन संगठनों को प्रशिक्षण और मार्गदर्शन प्रदान करती है, जिससे किसान समूह आधारित उत्पादन और विपणन रणनीतियाँ अपनाकर बेहतर मूल्य प्राप्त कर सकें।

5. PPP मॉडल का समावेश

कृषि विस्तार शिक्षा में सार्वजनिक-निजी भागीदारी (PPP) मॉडल का समावेश भी आवश्यक है। सरकारी संस्थान किसानों को नीतिगत समर्थन और प्रशिक्षण प्रदान करते हैं, जबकि निजी कंपनियाँ तकनीक, निवेश और बाजार तक पहुँच सुनिश्चित करती हैं। दोनों की साझेदारी से जैविक खेती को व्यापक स्तर पर बढ़ावा मिलता है। विस्तार शिक्षा इस साझेदारी को किसानों तक पहुँचाने का माध्यम बनती है और उन्हें आधुनिक तकनीक व संसाधनों से जोड़ती है।

सरकारी पहलें और संस्थागत समर्थन

भारत सरकार ने जैविक खेती को

बढ़ावा देने के लिए कई संस्थागत और नीतिगत कदम उठाए हैं, जिनमें सबसे प्रमुख National Centre for Organic and Natural Farming (NCOF) है, जो देश में जैविक एवं प्राकृतिक खेती का नोडल संगठन है और किसानों, कृषि वैज्ञानिकों तथा विस्तार शिक्षा विभागों को प्रशिक्षण, संसाधन और तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करता है। यह संस्थान किसानों को जैविक खाद निर्माण, कीट प्रबंधन, प्रमाणन प्रक्रिया और विपणन रणनीतियों की जानकारी उपलब्ध कराता है। इसके अतिरिक्त सरकार ने Paramparagat Krishi Vikas Yojana (PKVY) जैसी योजनाएँ शुरू की हैं, जिनका उद्देश्य क्लस्टर-आधारित जैविक खेती को प्रोत्साहित करना है, जिससे किसानों को सामूहिक रूप से खेती करने, लागत घटाने और विपणन में सुविधा मिलती है। साथ ही अन्य सब्सिडी और प्रमाणन सहायता योजनाएँ भी लागू की गई हैं, जो किसानों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप प्रमाणन दिलाने में मदद करती हैं। इन सभी पहलुओं का सीधा संबंध विस्तार शिक्षा विभाग से है, जो किसानों तक योजनाओं की जानकारी पहुँचाकर उन्हें टिकाऊ और किसान हितैषी खेती अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

जैविक खेती के प्रमुख लाभ

1. मिट्टी स्वास्थ्य और दीर्घकालिक उपज में सुधार—

जैविक खाद, गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट और हरी खाद मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाते हैं, जिससे जलधारण क्षमता और पोषक तत्वों का संतुलन सुधरता है। परिणामस्वरूप फसल की दीर्घकालिक उपज स्थिर और टिकाऊ रहती है।

2. उच्च बाजार मूल्य और उपभोक्ता माँग—

जैविक उत्पादों की घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजार में माँग तेजी से बढ़ रही है। किसानों को बेहतर मूल्य और निर्यात के अवसर प्राप्त होते हैं।

3. पर्यावरणीय लाभ—

जैविक खेती जल, वायु और भूमि प्रदूषण को कम करती है तथा जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखती है।

4. स्वास्थ्य सुरक्षा—

जैविक उत्पाद रासायनिक अवशेषों से मुक्त होते हैं, जिससे उपभोक्ताओं को सुरक्षित, पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक भोजन मिलता है।

5. लागत में कमी और टिकाऊ आजीविका—

स्थानीय संसाधनों जैसे गोबर, फसल अवशेष और जैविक अपशिष्ट का उपयोग कर लागत घटती है और किसानों को स्थिर आय प्राप्त होती है।

6. जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलता—

फसल चक्र, मिश्रित खेती और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इसे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक लचीला बनाता है।

7. ग्रामीण रोजगार और सामाजिक लाभ—

कम्पोस्ट निर्माण, जैविक इनपुट उत्पादन और विपणन गतिविधियों से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर पैदा होते हैं।

8. निर्यात और वैश्विक प्रतिस्पर्धा—

प्रमाणित जैविक उत्पाद किसानों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा में शामिल करते हैं और उन्हें विदेशी मुद्रा अर्जित करने का अवसर प्रदान करते हैं।

चुनौतियाँ

1. **जागरूकता की कमी—** कई किसान अभी भी जैविक खेती के लाभों और तकनीकों से अनभिज्ञ हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना का अभाव और प्रशिक्षण की कमी के कारण वे पारंपरिक खेती पर ही निर्भर रहते हैं।
2. **प्रारंभिक लागत—** जैविक प्रमाणन, विपणन और जैविक इनपुट की व्यवस्था में शुरुआती खर्च अधिक होता है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए

यह लागत वहन करना कठिन हो जाता है।

3. **बाजार तक पहुँच—** ग्रामीण क्षेत्रों में जैविक उत्पादों के लिए उचित और स्थायी बाजार उपलब्ध नहीं है। किसानों को अक्सर स्थानीय मंडियों में ही बेचना पड़ता है, जहाँ उन्हें उचित मूल्य नहीं मिल पाता।
4. **नीतिगत अस्पष्टता—** जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए स्पष्ट और सशक्त नीतियों की आवश्यकता है। कई बार योजनाएँ तो बनती हैं, लेकिन उनका क्रियान्वयन प्रभावी ढंग से नहीं हो पाता।
5. **उत्पादन में कमी का डर—** किसानों को लगता है कि जैविक खेती से पारंपरिक खेती की तुलना में उत्पादन घट सकता है। यह डर उन्हें नई तकनीक अपनाने से रोकता है।
6. **प्रमाणन प्रक्रिया की जटिलता—** जैविक खेती के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप प्रमाणन प्राप्त करना लंबी और जटिल प्रक्रिया है। इसमें समय, धन और तकनीकी जानकारी की आवश्यकता होती है, जो अधिकांश किसानों के लिए चुनौतीपूर्ण है।
7. **भंडारण और आपूर्ति श्रृंखला की कमी—** जैविक उत्पादों को सुरक्षित रखने और उपभोक्ताओं तक पहुँचाने के लिए कोल्ड-चेन, पैकेजिंग और लॉजिस्टिक सुविधाओं की कमी है। इससे उत्पाद की गुणवत्ता प्रभावित होती है और किसानों को नुकसान उठाना पड़ता है।

सुझाव

- ✓ **जागरूकता अभियान और प्रशिक्षण कार्यक्रम—** किसानों के लिए नियमित रूप से जागरूकता अभियान और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ, ताकि वे जैविक खेती के लाभ और तकनीकों को समझ सकें।

- ✓ **डिजिटल प्लेटफॉर्म और ई-कॉमर्स का उपयोग—** मोबाइल ऐप्स, ऑनलाइन पोर्टल और ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से जैविक उत्पादों को सीधे उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जाए।
- ✓ **वित्तीय सहायता और सब्सिडी—** छोटे और सीमांत किसानों को वित्तीय सहायता तथा सब्सिडी प्रदान की जाए, ताकि वे प्रारंभिक लागत वहन कर सकें।
- ✓ **जैविक प्रमाणन प्रक्रिया को सरल बनाना—** प्रमाणन प्रक्रिया को सरल और सुलभ बनाया जाए, ताकि अधिक किसान आसानी से प्रमाणन प्राप्त कर सकें।
- ✓ **अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देना—** कृषि विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों और विस्तार शिक्षा केंद्रों को जैविक खेती से संबंधित नई तकनीकों, जैविक इनपुट उत्पादन, कीट प्रबंधन और फसल विविधीकरण पर शोध करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। इससे किसानों को क्षेत्रीय परिस्थितियों के अनुरूप व्यावहारिक समाधान मिलेंगे और जैविक खेती अधिक प्रभावी व टिकाऊ बनेगी।

निष्कर्ष

जैविक खेती और विस्तार शिक्षा का संयोजन किसानों के लिए एक हरित भविष्य का मार्ग प्रशस्त करता है। यह न केवल पर्यावरण संरक्षण और स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है, बल्कि किसानों को स्थायी आय और वैश्विक बाजार से जुड़ने का अवसर भी प्रदान करता है। यदि जागरूकता, बाजार पहुँच और नीतिगत चुनौतियों का समाधान किया जाए, तो जैविक खेती भारतीय कृषि को टिकाऊ और किसान हितैषी बनाने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम साबित होगी।

पश्चिमी राजस्थान में चिया की उन्नत खेती का महत्व

निकिता कुमारी मील¹, पूजा विश्नोई², नलिनी रामावत³

परिचय :

पश्चिमी राजस्थान भारत का ऐसा भौगोलिक क्षेत्र है, जहाँ कृषि हमेशा से पानी की कमी, उच्च तापमान, रेतीली मिट्टी और वर्षा की अनिश्चितता जैसी चुनौतियों से घिरा रहता है। परंपरागत फसलों की उत्पादकता जलवायु की कठोरता के कारण प्रभावित होती रहती है। ऐसे में किसानों को ऐसी फसलों की आवश्यकता होती है जो कम पानी में भी बेहतर उत्पादन दे सकें और आर्थिक रूप से लाभप्रद हों। इन्हीं विकल्पों में से एक है चिया (*Salvia hispanica* L.), जो पश्चिमी राजस्थान के लिए एक उभरती हुई उच्च मूल्य वाली फसल बनकर सामने आ रही है।

चिया एक सूखा-सहनशील, उच्च पोषण संपन्न और बाजार में प्रचलित सुपरफूड है। यह फसल कम सिंचाई में भी उग जाती है तथा अत्यधिक गर्मी में स्थिर प्रदर्शन देती है। इसके बीजों की राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भारी मांग है। इसलिए चिया की उन्नत खेती इस क्षेत्र के किसानों के लिए आय-वृद्धि, जल संरक्षण और सतत कृषि की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित हो सकती है।

1. चिया फसल : पश्चिमी राजस्थान के लिए अनुकूलन

पश्चिमी राजस्थान में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस से अधिक तक पहुँच जाता है तथा वर्षा 100 से 300 मिमी के बीच रहती है। इस जलवायु में चिया एक उपयुक्त विकल्प है क्योंकि

- यह कम नमी में भी संतोषजनक वृद्धि करती है।
- इसकी जड़ें मिट्टी की गहराई तक जाकर नमी का उपयोग करती हैं।
- फसल को बहुत कम पोषक तत्वों की

आवश्यकता होती है।

- रेतीली दोमट मिट्टी में इसका प्रदर्शन श्रेष्ठ पाया गया है।

इसी कारण, चिया को जोधपुर, बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर जैसे जिलों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।



2. कम पानी में अधिक उत्पादन : पश्चिमी राजस्थान की जरूरत

इस क्षेत्र में नहर सिंचाई सीमित है तथा भूमिगत जल का स्तर काफी नीचे है। ऐसे में चिया की कम जल-आवश्यकता किसानों के लिए लाभदायक रहती है।

- फसल को 3 से 4 सिंचाइयों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।
- ड्रिप सिंचाई अपनाने पर 30 से 40 प्रतिशत तक पानी की बचत संभव है।
- सिंप्रंकलर से समान नमी मिलने के कारण वृद्धि बेहतर होती है।

जल संकट से जूझ रहे गांवों में ऐसी फसलें कृषि को स्थायी बनाती हैं और किसानों पर आर्थिक बोझ भी नहीं बढ़ने देतीं।

3. पोषक तत्वों से भरपूर : बढ़ती मांग का संकेत

चिया बीजों को 'सुपरफूड' के रूप में विश्वभर में मान्यता प्राप्त है। इनमें 20-25 प्रतिशत प्रोटीन, 30 प्रतिशत से अधिक फाइबर, ओमेगा-3 फैटी एसिड, कैल्शियम, मैग्नीशियम, आयरन, एंटीऑक्सीडेंट जैसे आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

आजकल हेल्थ इंडस्ट्री,

न्यूट्रास्यूटिकल सेक्टर, डाइट फूड कंपनियों और ऑनलाइन मार्केट में इसकी मांग तेजी से बढ़ रही है। भारत में भी लोग स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हो रहे हैं, जिससे चिया के बीजों की कीमत स्थिर और लाभदायक बनी हुई है।

4. कीट एवं रोग प्रबंधन में राहत : लागत में कमी

पश्चिमी राजस्थान में कीटनाशकों की उपलब्धता, उच्च लागत और प्रतिकूल मौसम के कारण फसलों का प्रबंधन कठिन हो जाता है। लेकिन चिया की फसल में कीटों का प्रकोप सामान्यतः बहुत कम पाया जाता है।

- इसकी सुगंधित प्रकृति कई कीटों को दूर रखती है।
- रोगों की समस्या अपेक्षाकृत कम होती है।
- जैविक खेती के लिए यह उपयुक्त है।

कम कीट होने से छिड़काव पर खर्च कम आता है तथा उत्पादन लागत घटती है। इससे छोटे एवं सीमांत किसान भी इस फसल को आसानी से अपना सकते हैं।

5. पर्यावरणीय लाभ

चिया न केवल किसानों की आय बढ़ाती है बल्कि पर्यावरण की भी रक्षा करती है,

- मिट्टी के कटाव को कम करती है।
- कार्बन अवशोषण क्षमता बढ़ाती है।
- जैव विविधता को बढ़ावा देती है।
- कम रासायनिक उपयोग से मिट्टी की सेहत सुधरती है।

इस प्रकार, चिया फसल पश्चिमी राजस्थान की कृषि को अधिक प्राकृतिक, टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल बना सकती है।

दुग्ध उत्पादन हेतु दुधारू पशुओं का चयन तथा गौशाला पत्रावली में शामिल मुख्य दस्तावेज

डॉ. देवीसिंह

भारत दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में प्रथम स्थान पर है तथा इसके साथ ही साथ दुग्ध उत्पादन दर भी लगातार बढ़ रही है। भारतवर्ष में कुल 54 गाय की नस्ल पंजीकृत है। इसमें से ज्यादातर गाय की नस्ल कम दुग्ध उत्पादन क्षमता वाली है तथा बहुत कम नस्ल ऐसी है जो ज्यादा दुग्ध उत्पादन की क्षमता रखती है। ऐसी नस्ल वाले पशु, जो ज्यादा दुग्ध उत्पादन की क्षमता रखते हैं उनकी पहचान एवं चयन करना डेयरी व्यवसाय को सफल बनाने तथा ज्यादा फायदा कमाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। कृषि एवं डेयरी व्यवसाय भारत के अर्थव्यवस्था की रीढ़ है तथा किसानों की आय का मुख्य स्रोत है। दुधारू पशु की खरीद में 70: सफलता सही चयन पर निर्भर करती है, इसलिए किसानों को नस्ल, उम्र, स्वास्थ्य और दूध क्षमता की बारीकी से जांच करनी चाहिए। डेयरी शुरू करने से पहले हमें ये जानना जरूरी है की कौन सी गाय या भैंस की नस्ल ज्यादा दूध देती है तथा उनका सही चुनाव कैसे किया जाए? दुधारू पशु का चयन करते समय यह ध्यान रखना बहुत जरूरी है की पशु एक अच्छे दुधारू नस्ल का हो, जिससे की अधिक से अधिक दुग्ध उत्पादन हो तथा किसान भाई बेहतर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकें। बेसिक एनिमल हसबैंड्री स्टैटिस्टिक्स 2025 के अनुसार, भारत में दूध उत्पादन में उत्तर प्रदेश पहले स्थान पर है, जिसकी हिस्सेदारी 15.66: है। राजस्थान 14.82: के साथ दूसरे और मध्य प्रदेश 9.12: के साथ तीसरे स्थान पर है।

दुधारू पशुओं का चयन करते समय कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को ध्यान में

रखना चाहिए, जैसे—पशु की उम्र शारीरिक बनावट वंशावली संतान उत्पादन इत्यादि।

पशु चयन के आधार:

दुधारू पशु का चयन करना अन्य पशुओं की तुलना में बहुत ही आसान है, बस कुछ बातों को ध्यान में रख कर किसान भाई उत्तम दुधारू पशु का चयन कर सकते हैं।

1. पशु की नस्ल : पशु का चयन करने से पहले उसकी नस्ल के बारे में जानना बहुत आवश्यक है कि यह गाय या भैंस दुधारू नस्ल की है या नहीं। क्योंकि दुधारू नस्ल की गायधैंस में ज्यादा दुग्ध उत्पादन करने की क्षमता होती है जिससे की किसान भाई अधिक मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं। हमारी देशी नस्ल की गायों में उत्पादन लागत कम व दुग्ध उत्पादन अनुकूल होने के कारण किसानों को अधिकतम लाभ प्राप्त होता है। देशी नस्ल की गायों में वातावरण के अनुसार अपने आप को ढालने के कारण बीमारियाँ होने की दर कम हो जाती है तथा अपने इस गुणों को जीवन में अच्छे से प्रदर्शित करती है।

राजस्थान में देशी गाय की आठ नस्ल हैं। हरियाणवी, राठी, थारपारकर, कांकरेच, गिर, नागौरी, साहीवाल, मालवी नस्लें राज्य के विभिन्न जिलों की जलवायु के अनुसार पाली जाती हैं। पशुपालन विभाग किसानों को देशी नस्ल की ज्यादा दूध देने वाली गाय उपलब्ध करवाने के लिए राज्य में कई जगह पशु संवर्धन पर काम कर रहा है।

नस्ल

राठी नस्ल

क्षेत्र

बीकानेर, चूरू, हनुमानगढ़,

श्रीगंगानगर

थारपारकर नस्ल
कांकरेच नस्ल
गिर नस्ल

बाड़मेर, जैसलमेर
पाली, जालौर सिरौही
अजमेर, भीलवाड़ा,
उदयपुर, प्रतापगढ़,
डूंगरपुर

नागौरी नस्ल
साहीवाल नस्ल

नागौर, जोधपुर
बाड़मेर, जैसलमेर,
बीकानेर,
श्रीगंगानगर

मालवी नस्ल

टोंक, सवाईमाधोपुर,
करौली

हरियाणवी नस्ल

सीकर, झुंझुनू

— दुधारू देशी गाय की नस्लें: गिर साहीवाल रेड सिन्धी थारपारकर और राठी।

— दुधारू विदेशी गाय की नस्लें: होलस्टीन फ्राइजियन और जर्सी।

2. पशु की वंशावली: दुधारू पशुओं के चयन में उनकी वंशावली का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। ज्यादातर दुधारू पशुओं का चयन उनकी नस्ल के आधार पर किया जाता है। पशु की दुग्ध उत्पादन क्षमता एवं शारीरिक विकास उसकी वंशावली पर निर्भर करता है इसीलिए यह कहा जाता है या देखा भी गया है कि दुधारू पशु के बच्चे भी अधिक दुग्ध उत्पादन की क्षमता रखते हैं अगर उनका सही ढंग से अच्छा प्रबंधन किया जाए।

3. पशु की उम्र : पशु जैसे की गाय एवं भैंस में दुग्ध उत्पादन उनकी उम्र पर निर्भर करता है। सामान्यतः गाय एवं भैंस की जनन क्षमता 10–12 वर्ष की उम्र के बाद समाप्त हो जाती है। गाय में दुग्ध उत्पादन प्रत्येक ब्यात में बढ़ता रहता है तथा तीसरे ब्यात तक चरम उत्पादन पर

पहुँच जाता है और उसके बाद हर ब्यात में धीरे धीरे कम होता चला जाता है, इसिलिये दुधारू पशु का चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए की वह पशु पहले या दुसरे ब्यात में ही हो जिससे की किसान उस पशु से अधिक से अधिक दुग्ध का उत्पादन प्राप्त कर सके। बेहतर आय के लिए दुग्ध उत्पादन हेतु 3-9 वर्ष की आयु सही होती है।

— उम्र की जांच दांतों से करें. निचले जबड़े में चार जोड़े स्थायी दांत : पहला 1.5 वर्ष, दूसरा 2.5 वर्ष, तीसरा 3 वर्ष अंत, चौथा 4 वर्ष अंत में निकलते हैं. इससे नई-पुरानी गाय की पहचान आसान होती है।

— सींगों के छल्ले भी सहायक हैं. पहला 3 वर्ष में, फिर सालाना एक. लेकिन रेत से छल्ले मिटाने के धोखे से सावधान रहें. बूढ़े पशु की हड्डियां कमजोर, त्वचा ढीली, आंख-कान के बीच गड्ढा होता है।

4. पशु का वजन : गाय व भैंस का व्यस्क वजन एक महत्वपूर्ण घटक है। अतः प्रारंभिक अवस्था में पशुओं की वृद्धि दर अच्छी होने से यह पशु के उत्पादन को बढ़ाती है। सामान्यतः पशुओं का वजन उत्पादन हेतु 300-400 किलोग्राम होना चाहिए। इससे अधिक व कम वजन के पशु दुग्ध उत्पादन हेतु अच्छे नहीं माने जाते।

5. पशु की बाह्य शारीरिक संरचना : जब हमें पशु के बारे में जानकारी उपलब्ध न हो तो उसकी बाह्य आकृति के आधार पर चयन करके खरीदा जा सकता है।

एक अच्छे दुधारू पशु की पहचान उसकी त्रिभुजाकार शारीरिक बनावट के आधार पर की जाती है। गाय के शरीर का अगला भाग पतला तथा पिछला भाग अपेक्षाकृत चौड़ा और भारी होना चाहिए जिससे की उसके गर्भाशय एवं थन का विकास अच्छी प्रकार से हो

सके।

पशु के थन विकसित तथा घुटना अथवा होक्क संधि तक लटकने चाहिए थन के पास पाई जाने वाली दुग्ध नसों (रक्त वाहिकाओं का नेटवर्क) विकसित होनी चाहिए चारो थनों के बीच स्पष्ट सीमांकन तथा थन के चारो चूचकों का आकार एक समान होना चाहिए।

मादा पशु को खरीदते समय यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए की पशु ग्याभिन है या उसकी ब्यात हो चुकी है। पशु अगर ग्याभिन है तो और कितने दिन बाद उसकी ब्यात होगी तथा अगर ब्यात हो चुकी है तो खरीददार को अपने सामने गाय का दुग्ध दोहन करना चाहिए। दुग्ध दोहन कार्य लगातार दो दिन तक सुबह दोपहर और शाम (तीन बार) को करना चाहिए जिससे यह सुनिश्चित हो सके की पशु में दुग्ध उत्पादन क्षमता ज्यादा है या नहीं। साथ ही साथ यह भी पता चल जाए की पशु प्रतिदिन कुल कितना दुग्ध उत्पादन कर सकता है।

दोहन कार्य पशु खरीदने से पहले करने से निम्न बातों का भी पता चल जाता है। जैसे—

— दुग्ध दोहन करते समय गाय की गतिविधियाँ।

— बिना बछड़े का दुग्ध दोहन संभव है या नहीं।

— पशु के चारो थनों से दुग्ध निकल रहा है या नहीं।

6. पशु में संतान उत्पादन : पशुओं में संतान उत्पादन दर भी दुधारू पशु के चयन में महत्वपूर्ण योगदान रखता है। संतान उत्पादन को आधार मानकर पशु का चुनाव करना बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है। पशु नियमित रूप से ताव में आना चाहिए। लम्बे समय तक ताव में न आने एवं ताव में अनियमितता होने से पशु की दुग्ध उत्पादन क्षमता प्रभावित होती है। एक अच्छी गाय प्रत्येक वर्ष एक

संतान पैदा करने की क्षमता रखती है बशर्ते उसको अच्छा प्रबंधन मिले तथा जिन गायों में यह क्षमता है उनका चयन दुधारू पशु के तौर पर अवश्य करना चाहिए जिससे किसान भाई अत्यधिक दूध उत्पादन एवं बछड़े प्राप्त कर सके।

गौशालाओं में रिकॉर्ड का रखरखाव एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें दूध उत्पादन, बछड़ों के जन्म-मृत्यु, पशु स्वास्थ्य और चारे की खपत जैसे डेटा शामिल हैं, जिससे प्रबंधन और सुधार में मदद मिलती हैय कई गौशालाएँ इन रिकॉर्ड्स को रख रही हैं, लेकिन अभी भी सुधार की गुंजाइश है, खासकर दूध के उपयोग और मूत्र प्रबंधन के मामले में, जहाँ कई जगह रिकॉर्ड नहीं रखे जाते या उनका उचित उपयोग नहीं होता. आधुनिक तकनीक और सरकारी मदद से, वैज्ञानिक सुझावों के साथ, गौशालाएँ बेहतर रिकॉर्ड रख सकती हैं और दूध उत्पादन व नस्ल सुधार में रिकॉर्ड बना सकती हैं, जैसा कि नागौर और बेटिया की गौशालाओं में देखा गया है।

गौशाला में पत्रावली (दस्तावेजों का समूह) का मतलब गौशाला के पंजीकरण, संचालन और सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने के लिए आवश्यक कागजात जैसे भूमि के दस्तावेज (स्वयं के नाम/ दानपत्र/ किरायानामा), संस्था का विधान, चारदीवारी, पानी, चारागाह आदि के प्रमाण, और पशुओं की संख्या से संबंधित रिकॉर्ड होता है, जो गौपालन विभाग की Gopalan Web Based application Portal वेबसाइट (Gopalan app) पर ऑनलाइन पंजीयन के लिए जरूरी हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि गौशाला नियमों के अनुसार चल रही है.

गौशाला पत्रावली में शामिल मुख्य दस्तावेज और विवरण :

1. भूमि संबंधी दस्तावेज (Land Documents):

— भूमि धारक का नाम गौशाला के नाम पर होना चाहिए।

— 100 गौवंश के लिए कम से कम 1 हेक्टेयर भूमि आवश्यक है, जो स्वयं के स्वामित्व की, रजिस्टर्ड दानपत्र (ऋपजि कममक) की या रजिस्टर्ड किरायानामा (Lease Deed) की हो सकती है।

2 संस्था और संचालन से जुड़े दस्तावेज (Institutional & Operational Documents):

— संस्था का विधान (Bye & laws): संस्था के नियम और उपनियम जो बताते हैं कि गौशाला कैसे चलेगी।

— **गौशाला का निर्माण विवरण (Construction Details):** चारदीवारी/फेंसिंग, मुख्य द्वार (जिस पर गौशाला का नाम लिखा हो), चारा भंडार गृह (Fodder Storage), पानी की टंकी (Water Tank) आदि का विवरण।

— पशुधन विवरण (Livestock Details): गौशाला में संधारित (Maintain) किए गए पशुओं की संख्या (जैसे 50 गौवंश) का रिकॉर्ड।

— अन्य आवश्यक बातें (Other Requirements):

— स्थान का चयन (Site Selection): ऐसी जगह जहां मल-मूत्र और गंदे पानी के निकास की उचित व्यवस्था हो।

— सुविधाएँ (Facilities): सभी जानवरों के लिए पर्याप्त जगह और उचित नाँद (Troughs)।

राजस्थान गौशाला प्रबंधन के प्रमुख बिंदु (Key Aspects of Gaushala Management in Rajasthan):

— पंजीकरण प्रक्रिया (Registration Process):

— गौशालाओं को राजस्थान गौशाला अधिनियम, 1960 या सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1958 के तहत पंजीकृत होना चाहिए।

— ऑनलाइन आवेदन के लिए Gopalan पोर्टल पर SSO ID के माध्यम से आवेदन किया जा सकता है।

— निर्माण और सुविधाएँ (Construction & Facilities):

— पंजीकृत गौशालाओं के लिए चारदीवारी, मुख्य द्वार (नाम पट्ट सहित), चारा भंडारण गृह, पानी की टंकी और आवासों का प्रावधान आवश्यक है।

— सरकारी सहायता और योजनाएँ (Government Support & Schemes):

गौवंश संरक्षण : तस्करी से बचाए गए गौवंश के भरण-पोषण के लिए गौशालाओं को सुपुर्द किया जाता है।

भूमि आवंटन : गौशालाओं को भूमि आवंटन की लीज अवधि 30 वर्ष तक बढ़ाई गई है।

आर्थिक सहायता : मुख्यमंत्री अनुप्रति कोचिंग योजना और पालनहार योजना जैसी योजनाओं में सुधार के प्रस्ताव, साथ ही बजट बढ़ाने के निर्देश।

— दस्तावेज और अनुपालन (Documents & Compliance):

गौशाला ट्रस्टियों को अधिनियम की धारा 8 के तहत रजिस्ट्रार को फार्म IX में वार्षिक विवरण प्रस्तुत करना होता है।

— **पत्रावली का महत्व :**

छात्रवृत्ति विवरण में सुधार, बजट वृद्धि, और रिक्त पदों को जोड़ने जैसे कार्यों के लिए संबंधित विभागों (जैसे वित्त विभाग) को समय पर और सही विवरण के साथ पत्रावली भेजना महत्वपूर्ण है।

गौशालाओं में रिकॉर्ड के प्रकार और स्थिति

— **दूध उत्पादन :** आधे से ज्यादा गौशालाओं में दूध उत्पादन का रिकॉर्ड रखा जाता है, लेकिन कई जगहों पर दूध का बड़ा हिस्सा प्रबंधकों द्वारा श्रमिकों को मुफ्त दिया जाता है और इसका रिकॉर्ड नहीं होता।

— **गोबर :** 54 प्रतिशत गौशालाओं में गोबर खाद के रूप में बिकता है, जबकि कुछ बायो-गैस और वर्मीकम्पोस्ट बनाती हैं कुछ जगहों पर गोबर का सही

निपटान नहीं होता।

— **मूत्र :** 76 प्रतिशत गौशालाओं में मूत्र बह जाता है, जबकि 24 प्रतिशत इसे जैव-कीटनाशक या दवा के लिए इस्तेमाल करती हैं। इसका रिकॉर्ड भी कम रखा जाता है।

— **पशु स्वास्थ्य और मृत्यु :** 80 प्रतिशत गौशालाओं में स्वास्थ्य रिकॉर्ड और दवाओं की सूची मिलती है, और बछड़ों के जन्म/मृत्यु दर के रिकॉर्ड भी रखे जाते हैं।

— **चारा :** 91 प्रतिशत गौशालाएं चारे का रिकॉर्ड रखती हैं, जबकि 76 प्रतिशत बिक्री का रिकॉर्ड रखती हैं।

रिकॉर्ड रखने के लाभ

— **बेहतर प्रबंधन :** डेटा से पता चलता है कि क्या काम कर रहा है और कहाँ सुधार की जरूरत है, जैसे पोषण या स्वच्छता।

— **नस्ल सुधार :** उच्च गुणवत्ता वाले पशुओं का रिकॉर्ड रखने से बेहतर नस्ल विकसित करने में मदद मिलती है।

— **आर्थिक लाभ :** दूध, खाद और अन्य उत्पादों के रिकॉर्ड से गौशाला की आय बढ़ती है और अनुदान का सही उपयोग होता है।

आधुनिक और प्रभावी तरीके

— **तकनीक का उपयोग :** नागौर की गौशाला में CCTV और ऑटोमेटिक सिस्टम से निगरानी और रिकॉर्डिंग की जाती है।

— **वैज्ञानिक सुझाव :** पशु वैज्ञानिक टीकाकरण, पोषण और सीमन तकनीक पर सुझाव देकर रिकॉर्ड सुधारने में मदद करते हैं।

— **सरकारी योजनाएँ :** सरकार द्वारा अनुदान और सहायता से गौशालाओं को बेहतर रिकॉर्ड रखने और प्रबंधन करने में मदद मिलती है।

तुलसी की खेती किसानों के लाभकारी तुलसी औषधीय, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से एक अमूल्य पौधा

सुशीला¹, डॉ. सीमा त्यागी²



ऐसा विश्वास है कि घर में तुलसी का पौधा लगाने से नकारात्मक ऊर्जा दूर होती है और वातावरण शुद्ध रहता है। इस प्रकार तुलसी केवल एक औषधीय पौधा ही नहीं, बल्कि आस्था और संस्कृति

भारत की धरती को ऋषियों और आयुर्वेद की भूमि कहा जाता है। यहाँ की वनस्पतियाँ केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि जीवनदायिनी औषधियाँ हैं। इन्हीं में से एक है तुलसी, जिसे आयुर्वेद में "औषधियों की रानी" का स्थान प्राप्त है। यह पौधा भारतीय संस्कृति, स्वास्थ्य और अध्यात्म का प्रतीक माना जाता है। आज के समय में जब प्रदूषण, असंतुलित जीवनशैली और संक्रमणजनित रोग बढ़ रहे हैं, तब तुलसी का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। यह न केवल स्वास्थ्य की रक्षा करती है, बल्कि पर्यावरण को भी शुद्ध रखने में सहायक होती है।

तुलसी का परिचय एवं प्रकार

तुलसी एक सुगंधित, झाड़ीदार पौधा है जो सामान्यतः 1 से 3 फीट तक ऊँचा होता है। इसकी पत्तियाँ हरी या बैंगनी रंग की होती हैं और इनमें विशेष प्रकार की सुगंध पाई जाती है।



राम तुलसी

श्याम तुलसी

1. राम तुलसी — इसके पत्ते हरे रंग के होते हैं।

2. श्याम या कृष्ण तुलसी — इसके पत्ते हल्के बैंगनी रंग के होते हैं और औषधीय गुण अधिक माने जाते हैं।

तुलसी गर्म और समशीतोष्ण जलवायु में आसानी से उग जाती है। इसे अधिक पानी या विशेष देखभाल की आवश्यकता नहीं होती, इसलिए यह घरों के आँगन, गमलों और खेतों में सरलता से लगाई जा सकती है।

धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व

भारतीय परंपरा में तुलसी को अत्यंत पवित्र माना गया है। लगभग हर हिंदू परिवार में तुलसी का पौधा लगाया जाता है और प्रतिदिन उसकी पूजा की जाती है। धार्मिक ग्रंथों के अनुसार तुलसी देवी लक्ष्मी का स्वरूप मानी जाती हैं।

कार्तिक मास में "तुलसी विवाह" का आयोजन किया जाता है, जो शुभ और पवित्र माना जाता है। पूजा-पाठ और प्रसाद में तुलसी दल (पत्तियाँ) का विशेष महत्व है।

का प्रतीक भी है।

तुलसी के औषधीय गुण

तुलसी में अनेक प्रकार के औषधीय तत्व पाए जाते हैं, जैसे क्यूजेनॉल, एंटीऑक्सीडेंट, एंटीबैक्टीरियल और एंटीवायरल गुण। आयुर्वेद में इसे कई रोगों की प्राकृतिक औषधि माना गया है।

1. सर्दी-खांसी और जुकाम

तुलसी की पत्तियों का काढ़ा सर्दी, खांसी और गले की खराश में अत्यंत लाभकारी होता है। यह कफ को दूर करने में सहायक है।

2. रोग प्रतिरोधक क्षमता

तुलसी का नियमित सेवन शरीर की इम्यूनिटी बढ़ाता है, जिससे शरीर संक्रमण से लड़ने में सक्षम बनता है।

3. पाचन तंत्र के लिए लाभकारी

तुलसी गैस, अपच और पेट दर्द में राहत देती है। यह पाचन शक्ति को मजबूत बनाती है।

4. तनाव और मानसिक शांति

तुलसी की चाय मानसिक तनाव को कम करने और मन को शांत

1 स्नातकोत्तर विद्यार्थी एवं 2 सहायक आचार्य, प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

रखने में सहायक होती है।

5. त्वचा और बालों के लिए

तुलसी का रस त्वचा रोग, मुंहासे और संक्रमण में उपयोगी है। इसके प्रयोग से त्वचा स्वस्थ और स्वच्छ रहती है।

आधुनिक विज्ञान में तुलसी का महत्व

आज के वैज्ञानिक शोध भी तुलसी के औषधीय गुणों को स्वीकार करते हैं। कई अध्ययनों में यह पाया गया है कि तुलसी में मौजूद तत्व शरीर को बैक्टीरिया और वायरस से बचाने में सहायक होते हैं।

कोविड-19 महामारी के बाद लोगों में हर्बल और प्राकृतिक उपचार की ओर झुकाव बढ़ा है। तुलसी युक्त काढ़ा, चाय और अर्क की मांग में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। आयुर्वेदिक दवाइयों और हर्बल उत्पादों में तुलसी का व्यापक उपयोग हो रहा है।

तुलसी की खेती और आर्थिक महत्व



तुलसी की खेती किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो रही है। यह कम लागत में उगाई जा सकती है और अधिक देखभाल की आवश्यकता नहीं होती।

खेती की विशेषताएँ –

3- 4 महीनों में फसल तैयार वर्ष में 2-3 बार कटाई संभव कम पानी की आवश्यकता सामान्य मिट्टी में भी अच्छी उपज तुलसी से निकाला गया "तुलसी तेल" दवा और कॉस्मेटिक उद्योग में उपयोग होता है। इसकी पत्तियाँ, पाउडर और अर्क बाजार में अच्छे दामों पर बिकते हैं। छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह आय का अच्छा स्रोत बन सकती है।

पर्यावरण संरक्षण में भूमिका

तुलसी वायु को शुद्ध करने में सहायक मानी जाती है। यह वातावरण में ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ाने और हानिकारक तत्वों को कम करने में मदद करती है। घर के आँगन या बालकनी में तुलसी लगाने से वातावरण ताजा और सुगंधित रहता है।

निष्कर्ष

तुलसी भारतीय संस्कृति, स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। यह पौधा धार्मिक आस्था का प्रतीक होने के साथ-साथ प्राकृतिक औषधि का अमूल्य स्रोत भी है।

आज के आधुनिक युग में, जब लोग

प्राकृतिक जीवनशैली की ओर लौट रहे हैं, तुलसी का महत्व और अधिक बढ़ गया है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने घर में तुलसी का पौधा लगाए और उसके औषधीय गुणों का लाभ उठाए, तो समाज अधिक स्वस्थ, स्वच्छ और समृद्ध बन सकता है।

अतः तुलसी केवल एक पौधा नहीं, बल्कि जीवन को स्वस्थ और संतुलित बनाने का माध्यम है।

पत्रिका में
प्रकाशित
आलेख/
विचार
लेखकों
के
अपने हैं।

अप्रैल माह के कृषि कार्य

डॉ. एन. के. शर्मा, निदेशक अनुसंधान
स्वा. के. रा. कृ. वि., बीकानेर

सस्य विज्ञान :

देशी कपास : बुवाई का उपयुक्त समय : देशी कपास की बुवाई का उपयुक्त समय अप्रैल माह है। विलम्ब से की गई बिजाई से फसल की उपज में कमी आती है। नरमा की बिजाई अप्रैल के द्वितीय पखवाड़े से मई के प्रथम पखवाड़े तक पूरी कर लें। **बीज की मात्रा:**—देशी कपास 3.0 किलोग्राम तथा नरमा में 6.0 किलोग्राम बीज प्रति बीघा डाले। **खाद एवं उर्वरक :**—देशी कपास तथा नरमा में 2—3 टन खाद प्रति बीघा के हिसाब से बुवाई के लगभग एक माह पहले डालकर जुताई कर मिला दें। देशी कपास में 22.5 किलो नत्रजन 5 किलोग्राम फास्फोरस प्रति बीघा काम में ले नत्रजन की आधी मात्रा तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बिजाई के समय काम में ले। **उपयुक्त किस्में : देशी कपास :**— आर.जी.—8, आर. जी.—18 । **नरमा :**— आर.एस.टी.—9, आर एस—875, आर एस—810, बीकानेरी नरमा आर.एस.—2013 तथा गंगानगर अगेती है। **बिजाई की विधि :**— देशी कपास की बिजाई कतारों में 67.5 से.मी. पर तथा पौधे से पौधे की दूरी 20—25 से.मी. रखें। नरमा की बिजाई 60.0 से.मी. पर कतारों में करें।

पौध संरक्षण : पौध व्याधि : जीरा : यह फसल लगभग पक कर तैयार हो गई होगी फिर भी अगर देशी से बुवाई की गई हो तो नीचे वर्णित रोगों का प्रकोप हो सकता है। अगेती फसल पक गई हो तो इसे काट कर अच्छी तरह से खलिहान में सुखा लेवे तथा बीज निकाल लेवे। नमी रहने पर फफूंद लग जाती है व बीज की चमक कम हो सकती है। **छाछिया रोग :** देशी से बुवाई वाली फसल में पकाव की अवस्था में यह रोग लगने की संभावना है। रोग के कारण पत्तियाँ, तना व बीजों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। फलस्वरूप प्रकाश संश्लेषण की दर कम हो जाती है फलस्वरूप यह फफूंद बीजों व पौधे को संक्रमित करती हुई दानों को छोटा व अधपका कर देती है जिससे उपज कम होती है तथा गुणवत्ता भी कम होती है। रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही केराथेन 1 मिली/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें या 25 किलो गन्धक चूर्ण प्रति हैक्टर या 2 ग्राम/लीटर घुलनशील गंधक की दर से छिड़काव करें। **चना :** देशी से बोई गई फसल में झुलसा रोग लगने की संभावना रहती है यह रोग एस्कोकाइटा रैबी नामक फफूंद द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण शुरु में पत्तियों पर जलशोषित धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं जो धीरे-धीरे गोल भूरे किनारे तथ केन्द्र में पीलापन लिये धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं इसी तरह के धब्बे तने तथा फलों पर भी बन जाते हैं। उग्र अवस्था में तनों पर लम्बे धब्बों के रूप में दिखते हैं जिससे तने व डंठल सूखकर (टूटकर) झुक जाते हैं। रोकथाम हेतु लक्षण दिखाई पड़ते ही मैकोजेब 2—3 ग्राम/लीटर या क्लोरोथैलोनिन 01 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

गेहूँ : अप्रैल माह में गेहूँ पक कर तैयार होने लगते हैं। इस समय अनावृत कण्डवा रोग का प्रकोप कहीं-कहीं दिखाई पड़ता है जो अस्टीलेगो—नुडा ट्रीटीसाई नामक कवक द्वारा होता है जो आंतरिक बीजोद्भ रोग है। इसके लक्षण बालीयों में दाने की जगह काला चूर्ण के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इस तरह की रोगी बालीयों को तोड़कर खेत से बाहर जला दें।

सब्जियों के रोग : मीर्च, टमाटर, बैंगन : माह अप्रैल में उपरोक्त सब्जियों की पौध तैयार करनी होती है जिन पर आद्रगलन या डेम्पिंग ऑफ नामक रोग जो पिथीयम नामक फफूंद के कारण होता है कि भूमि या बीज के माध्यम से फैलता है जो बीज की बुवाई के तत्पश्चात् पौधे की छोटी अवस्था में होता है जिसके कारण जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़ कर कमजोर हो जाता है तथा पौध गिरकर मरने लगती है। रोकथाम हेतु बीजों को बुवाई से पूर्व 2 ग्राम केप्टान थाइरम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें। पौध स्थानान्तरण के बाद केप्टान या कार्बेन्डेजिम को पानी के साथ दें। **भिण्डी :** **जड़गलन :** इस रोग के कारण पौधों की जड़े काली पड़ कर सड़ जाती है। रोकथाम हेतु लक्षण दिखाई देते ही टोप्सीन कार्बेन्डेजिम 0.2 प्रतिशत घोल को पानी के साथ दें। **मूलग्रन्थी :** इसके प्रकोप से पौधे की जड़ों में गांठे बन जाती हैं। पौधे पीले पड़ जाते हैं तथा बढ़वार रुक जाती है। रोकथाम हेतु नीम की खाद भूमि में मिलावें। **ग्वार : जड़गलन रोग :** रोग के कारण पौधों की जड़े काली पड़ कर सड़ जाती है तथा पौधा छोटी अवस्था में ही मर जाता है। रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व बीजों को कार्बेन्डेजिम 2 ग्राम टोपसिन एम—2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें। अंगमारी झुलसा रोग की रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व प्रति किलो बीज को 250 पी.पी.एम. एग्रीमाईसीन या स्ट्रैप्टोसाइक्लिन के घोल में 2 घण्टे भिगोकर उपचारित करें। **कुस्माण्डकुल** की सब्जियों में माह अप्रैल में किसी प्रकार का रोग नहीं लगता है।

उद्यान विज्ञान : बेर में फल तुड़ाई का कार्य लगभग पूरा हो चुका होगा अतः फल वृक्ष पूर्ण रूप से सुसुप्तावस्था में जा सके इसलिए सिंचाई पूर्ण रूप से रोक देनी चाहिये। साथ ही नंबू व अनार में भी सर्दी ऋतु को फसल लेने के लिये एक सिंचाई करें तथा 0.4 प्रतिशत केलिसियम कार्बोनेट का घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल से छिड़काव करें। जायद ऋतु में उगाई गई सभी सब्जियों में सिंचाई की पूर्ण अवस्था करे तथा साथ ही निराई—गुड़ाई कर खरपतवार को नष्ट करे। व्याधियों एवं कीटों की रोकथाम के लिये पादप संरक्षण का प्रयोग करें।